धर्मवीर भारती की मशहूर कविता मुनादी

खलक खुदा का, मुलुक बाश्शा का
हुकुम शहर कोतवाल का...
हर खासो-आम को आगह किया जाता है
कि खबरदार रहें
और अपने-अपने किवाड़ों को अन्दर से
कुंडी चढ़ाकर बन्द कर लें
गिरा लें खिड़कियों के परदे
और बच्चों को बाहर सड़क पर न भेजें
क्योंकि
एक बहत्तर बरस का बूढ़ा आदमी अपनी काँपती कमजोर आवाज में
सड़कों पर सच बोलता हुआ निकल पड़ा है !

शहर का हर बशर वाकिफ है
कि पच्चीस साल से मुजिर है यह
कि हालात को हालात की तरह बयान किया जाए
कि चोर को चोर और हत्यारे को हत्यारा कहा जाए
कि मार खाते भले आदमी को
और असमत लुटती औरत को
और भूख से पेट दबाये ढाँचे को
और जीप के नीचे कुचलते बच्चे को
बचाने की बेअदबी की जाय !

जीप अगर बाश्शा की है तो
उसे बच्चे के पेट पर से गुजरने का हक क्यों नहीं ?
आखिर सड़क भी तो बाश्शा ने बनवायी है !
बुड्ढे के पीछे दौड़ पड़ने वाले
अहसान फरामोशों ! क्या तुम भूल गये कि बाश्शा ने
एक खूबसूरत माहौल दिया है जहाँ
भूख से ही सही, दिन में तुम्हें तारे नजर आते हैं
और फुटपाथों पर फरिश्तों के पंख रात भर
तुम पर छाँह किये रहते हैं
और हूरें हर लैम्पपोस्ट के नीचे खड़ी
मोटर वालों की ओर लपकती हैं
कि जन्नत तारी हो गयी है जमीं पर;
तुम्हें इस बुड्ढे के पीछे दौड़कर
भला और क्या हासिल होने वाला है ?

आखिर क्या दुश्मनी है तुम्हारी उन लोगों से
जो भलेमानुसों की तरह अपनी कुरसी पर चुपचाप
बैठे-बैठे मुल्क की भलाई के लिए
रात-रात जागते हैं;
और गाँव की नाली की मरम्मत के लिए
मास्को, न्यूयार्क, टोकियो, लन्दन की खाक
छानते फकीरों की तरह भटकते रहते हैं...
तोड़ दिये जाएँगे पैर
और फोड़ दी जाएँगी आँखें
अगर तुमने अपने पाँव चल कर
महल-सरा की चहारदीवारी फलाँग कर
अन्दर झाँकने की कोशिश की !

क्या तुमने नहीं देखी वह लाठी
जिससे हमारे एक कद्दावर जवान ने इस निहत्थे
काँपते बुड्ढे को ढेर कर दिया ?
वह लाठी हमने समय मंजूषा के साथ
गहराइयों में गाड़ दी है
कि आने वाली नस्लें उसे देखें और
हमारी जवाँमर्दी की दाद दें

अब पूछो कहाँ है वह सच जो
इस बुड्ढे ने सड़कों पर बकना शुरू किया था ?
हमने अपने रेडियो के स्वर ऊँचे करा दिये हैं
और कहा है कि जोर-जोर से फिल्मी गीत बजायें
ताकि थिरकती धुनों की दिलकश बलन्दी में
इस बुड्ढे की बकवास दब जाए !

नासमझ बच्चों ने पटक दिये पोथियाँ और बस्ते
फेंक दी है खडिया और स्लेट
इस नामाकूल जादूगर के पीछे चूहों की तरह
फदर-फदर भागते चले आ रहे हैं
और जिसका बच्चा परसों मारा गया
वह औरत आँचल परचम की तरह लहराती हुई
सड़क पर निकल आयी है।

ख़बरदार यह सारा मुल्क तुम्हारा है
पर जहाँ हो वहीं रहो
यह बगावत नहीं बर्दाश्त की जाएगी कि
तुम फासले तय करो और
मंजिल तक पहुँचो

इस बार रेलों के चक्के हम खुद जाम कर देंगे
नावें मँझधार में रोक दी जाएँगी
बैलगाड़ियाँ सड़क-किनारे नीमतले खड़ी कर दी जाएँगी
ट्रकों को नुक्कड़ से लौटा दिया जाएगा
सब अपनी-अपनी जगह ठप !
क्योंकि याद रखो कि मुल्क को आगे बढ़ना है
और उसके लिए जरूरी है कि जो जहाँ है
वहीं ठप कर दिया जाए !

बेताब मत हो
तुम्हें जलसा-जुलूस, हल्ला-गूल्ला, भीड़-भड़क्के का शौक है
बाश्शा को हमदर्दी है अपनी रियाया से
तुम्हारे इस शौक को पूरा करने के लिए
बाश्शा के खास हुक्म से
उसका अपना दरबार जुलूस की शक्ल में निकलेगा
दर्शन करो !
वही रेलगाड़ियाँ तुम्हें मुफ्त लाद कर लाएँगी
बैलगाड़ी वालों को दोहरी बख्शीश मिलेगी
ट्रकों को झण्डियों से सजाया जाएगा
नुक्कड़ नुक्कड़ पर प्याऊ बैठाया जाएगा
और जो पानी माँगेगा उसे इत्र-बसा शर्बत पेश किया जाएगा
लाखों की तादाद में शामिल हो उस जुलूस में
और सड़क पर पैर घिसते हुए चलो
ताकि वह खून जो इस बुड्ढे की वजह से
बहा, वह पुँछ जाए !
बाश्शा सलामत को खूनखराबा पसन्द नहीं !

आप तो मुझे माफ ही कर दें

दिनेश चौधरी

बड़े-बड़े लोग, बड़े-बड़े लोगों से माफी मांग रहे हैं तो मेरा भी बड़ा मन कर रहा है कि माफी मांग ही लूँ। माफी मांगने में वैसे भी न कुछ घटता है, न खत्म होता है। सड़क चलते भिखारी से भी हम रोज माफी मांगते हैं और कहते हैं, माफ कर दो बाबा! वैसे अपने यहाँ माफी मांगने का एक पर्व भी है। माफी माँगना पुण्य का काम है। माफी मांगते रहने से गलती करते रहने की छूट भी मिलती रहती है। इधर एक गलती की और उधर खटाक से माफीनामा ठोंक दिया। प्रोफेशनल किस्म के लोग पहले ही माफी मांग लेते है और गलती बाद में करते हैं।

कल पड़ोस में एक आयोजन था तो भैयाजी से भेंट हो गई। भैयाजी रूलिंग पार्टी में हैं। उनसे जैसे ही नजरे मिलीं में उनसे माफी मांगने के लिए लपका। चिंता उन्हें भी थे। वे ज्यादा पेशेवर निकले। जब तक मैं उन्हें नमस्ते करता उतनी देर में उन्होंने माफी मांग ली। में उनसे कहने वाला था कि, " माफ कीजियेगा, पिछली बार हमसे गलती हो गई थी। इस बार भूले से भी आपको वोट नहीं देंगे।" पर वे ज्यादा फुर्तीले निकले ओर कहा कि, "माफ कीजियेगा, हम आपकी अपेक्षाओं पर खरे उतर नहीं सके। पर कोई बात नहीं, इस बार एक मौका और दीजिए, आपको कोई शिकायत नहीं रहेगी।" हर बार माफी मांगने में अपनी सुस्ती की वजह से अपन को घाटा उठाना पड़ता है। अपने यहां वोटर के माफी मांगने की परंपरा का ज्यादा चलन नहीं है। सामूहिक रूप से सरकार इसे वैधता दिला तो तो यही 'राइट टू रिकॉल' कहलाएगा।

पड़ोस में एक अग्रवाल सर हैं। बड़े हिसाबी हैं। रिश्तेदारों के घर जाना पड़े और मिठाई लेनी हो तो हिसाब से लेते हैं। मसलन आधा किलो मिठाई की जरूरत हो तो 400 ग्राम ही तौलने को कहते हैं। अब हलवाई तो डिब्बा आधा किलो का ही देगा। रिश्तेदार मिठाई तौलने से रहा। वह तो यही सोचेगा कि आध किलो होगी। अब अगर सीजन में 50 घरों में जाना हुआ तो हिसाब लगाइए कि बचत कितने की होती है? तो यही अगरवाल सर बनते तक कभी अपने पैसे किसी भी काम में नहीं खर्चते। पैसे पास होंगे तब भी आपके पास चले आएंगे और कहेंगे, "माफ कीजियेगा भाई साहब! जरा दो हजार होंगे क्या? एटीएम कार्ड ऑफिस में छूट गया है।" वे सोचते हैं कि अपने पैसे थोड़े दिन खाते में रह जाएं तो कुछ ब्याज तो मिल ही जाएगा। उनके पास हर बार नया बहाना होता है और में कभी इनसे नहीं कह पाता कि, "माफ कीजिए अगरवाल साब, अपने हाथ जरा इन दिनों तंग चल रहे हैं।" माफी मांगने में भी अपने हाथ जरा तंग ही हैं।

माफी मांगने का रिवाज पौराणिक काल से ही है। समुद्र को लांघने से पहले भगवान श्रीराम ने उनसे हाथ जोड़कर माफी मांग ली थी। यह विनम्रता वाली माफी थी। "आप विशाल हैं, बलशाली हैं, महान हैं। मैं तुच्छ प्राणी आपकी छाती पर पाँव धरकर जा रहा हूँ तो हे विशाल-हृदय-धारी! मुझे क्षमा कर दें।" शबरी के जूठे बेर खा लेने वाला व्यक्ति विनम्र ही हो सकता है, वह हर समय तीर को धनुष पर चढ़ाए हुए आक्रमण की मुद्रा में नहीं घूम सकता। यह प्रचारित करने वाले लोग माफी के लायक नहीं हैं, हालांकि वे माफी मांगेंगे भी नहीं। विनम्रता वाली माफी ही असली माफी होती है। इसके अलावा किसी और प्रयोजन से कोई माफी मांगे तो उसे इसके लिए भी माफी मांग ही लेनी चाहिए।

अहंकार वाली माफी सबसे तुच्छ किस्म की माफी होती ही और यह न मांगी जाए तो बेहतर। अहंकारी व्यक्ति कभी अपनी गलती स्वीकार नहीं करता। वह बहस करता है। फिर जब बहस में हारने लगता है तो कहता है, "भाई माफ करो! ,हमें तुम से बहस नहीं करनी है।" हालांकि इस बीच वह पूरी बहस कर चुका होता है और पराजित होने के बाद वह माफी को ढाल की तरह इस्तेमाल करता है। इस तरह की माफी की मांग रोज चलने वाली टीवी की चखचख में खूब है। अहंकार वाली माफी पर सरकार अगर जीएसटी लगा दे तो उसकी आमदनी में खासी बढोत्तरी हो सकती है।

दीनता की माफी बड़ी कारुणिक होती है। इस पर नौकरशाही का रंग चढ़ जाए तो क्या कहने! चेखव की मशहूर कथा है जिसमें एक बाबू को सार्वजनिक स्थल पर छींक आ जाती है। बाद में मालूम होता है कि सामने साहब बैठे हुए हैं। वह माफी मांगता है और साहब माफ कर देते हैं। पर बाबू को लगता है कि गलती बड़ी है, वह दोबारा माफी मांगता है। यह सिलसिला कुछ लम्बा खींच जाता है और और साहब बार-बार की माफी से सचमुच चिढ़ उठते हैं। मारे ग्लानि के सुबह बाबू की मौत हो जाती है। यह बाबू-मानसिकता की करुण गाथा भी है और नौकरशाही के रौब पर तंज भी।

माफी का कद, आकार, वजन, भार, घनत्व आदि गलती के अनुपात में होता है। जैसी और जितनी गलती, वैसी और उतनी माफी। यह नहीं कि पहाड़-सी गलती हो और राई बराबर माफी मांग ली। एक किस्सा याद आ रहा है। एक मुशायरे में फिराक गोरखपुरी भी शिरकत कर रहे थे। सब जानते हैं कि फिराक साहब अपने दौर के बड़े शायर थे। संचालक उनके कद से आक्रांत था। उनकी बारी आई तो उन्हें किस तरह बुलाए, सूझ नहीं रहा था। हारकर उसने बदहवासी में कहा, "अब मैं जिनको बुलाने जा रहा हूँ, उनके लिए बारी शब्द छोटा है। कहना होगा कि जिनका "बारा" है, वह फिराक साहब हैं। फिराक साहब बिगड़ गए। कहा यह क्या बेहूदगी है? में नहीं कहता अपना कलाम। सभा में भगदड़ मच गई। संचालक को काटो तो खून नहीं। बड़ी मुश्किल से फिराक साहब को मनाया गया। संचालक माफी मांगने लगा। फिराक साहब थोड़े सामान्य हुए। फिर मुस्कुराते हुए कहा कि "गलती इतनी बड़ी है कि माफी से काम नहीं चलेगा, "माफ़ा" मांगो!"

माफी विवश होने पर भी मांगी जाती है। सारिका में प्रकाश पण्डित "गुस्ताखियां" नाम से एक कॉलम लिखते थे। यह जिक्र शायद देवेंद्र सत्यार्थी का है पर बात पुरानी है, इसलिए नाम भूल भी सकता हूँ। गलती हो जाए तो माफ कर दें। उन्हें अपनी नई रचनाओं को सुनाने की बीमारी-सी थी। नौबत यहाँ तक पहुँची कि घर के दरवाजे पर दस्तक होने पर पहले गृहिणी झाँक कर देख लेती थी कि कौन है? आगन्तुक अगर लेखक निकला तो कह दिया जाता कि "वे घर पर नहीं हैं।" हालात इतने बिगड़े कि लेखक को अपच हो गई। वे तांगे वाले के पास गए और कहा कि चान्दनी चौक जाना है। तांगे वाले ने 5 रुपये माँगे। लेखक ने कहा, "10 दूँगा। मेरी नई रचना सुननी पड़ेगी।" तांगे वाले ने विवश होकर हाथ जोड़ दिए। कहा, "माफ करें हुजूर! मैं तो तैयार हूँ, पर आप एक बार घोड़े से पूछ लें।"

डिजिटल युग में माफी माँगना आसान है। कुछ कहना नहीं पड़ता। हिमोजी बने हुए हैं। जिससे माफी मांगनी है, उसकी दीवार पर चिपका दिया। आत्म-सम्मान का कोई संकट खड़ा नहीं होता। सामने वाला भी सोचता है कि जाने दो। एक नम्बर का लुच्चा है पर सॉरी कह रहा है, यही बड़ी बात है।

माफी का वर्ग-चरित्र बड़ा उलझा हुआ होता है। अमीर आदमी बैंक से ढेर सारा कर्ज लेता है और सरकार से कहता है माफ कर दो। सरकार बड़ी दयालु होती है, माफ कर देती है। किसान कर्ज लेकर डूब जाता है। सरकार से कहता है, माफ कर दो। सरकार बड़ी सम्वेदनशील होती है। एक किसान को माफ कर दिया तो सारे किसान माफी मांगेंगे। माफी मांगने का फैशन बन जाएगा। इसलिए कर्ज माफी के बदले सरकार किसान से माफी मांग लेती है और बदले में किसान दुनिया से माफी मांग लेता है।

माफी मांगते हुए एक बात आपसे कहना चाहता हूँ। कोई आपसे बात-बात में माफी मांगे तो समझ लें कि वह इंसान निहायत काइयां किस्म का है और उसे काम निकालने की तरकीब आती है। माफ कीजियेगा, वह हर वाक्य में माफी मांगता है। ऐसे व्यक्ति से माफ करें, जरा सावधान ही रहें।

अंक व सुविधा विद्या का पर्याय नही

सुविधाएँ व अंक शिक्षा का पर्याय नहीं हो सकते परन्तु आज शिक्षा का अर्थ केवल अंक पाना और सुविधाओं का उपयोग करना ही रह गया है। आज का अभिभावक अपने बच्चों के लिए केवल अधिक से अधिक अंकों की चाह रखता है और सुविधाओं की मात्रा पर ध्यान देता है।

बच्चों के चरित्र के निर्माण की बात कोई नहीं सोचता। अब बच्चा केवल अंक पाना और अंकों के माध्यम से अच्छी नौकरी प्राप्त करना तथा एक मोटी रकम कमाना ही अपने जीवन का उद्देश्य समझता है तो भला इस स्थिति में एक स्वस्थ समाज का निर्माण कैसे हो सकता है? क्योंकि बच्चों के मस्तिष्क में केवल उसके अपने स्वार्थ की बात ही पनप रही है। वह केवल अपने लिए ही सोच रहा है। हर कीमत पर उसे केवल अपना ही भविष्य दिखता है। आज स्थिति यह है कि मनुष्य असभ्य और पशु सभ्य नज़र आने लगे हैं। मनुष्य अपनी सभ्यता का परिचय नहीं देते जबकी पशु, पशु होकर भी सभ्यता का ही अनुसरण करते हैं।

प्राचीनकाल में भारत अपनी सभ्यता, शिक्षा एवं संस्कृति के लिए विख्यात था। हमारी प्राचीनतम शिक्षण प्रणाली दुनिया के लिए सदैव कौतुहल का विषय रही। विश्व की अनेक सभ्यताएँ पठन-पाठन के लिए भारत के बताए मार्ग पर चलती रहीं। नालंदा और तक्षशिला अपनी शिक्षा पद्धति के लिए ही विख्यात थे। परन्तु आज छवि बदल चुकी है। स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक की स्थिति बदहाल है। सोचने का विषय है कि यह स्थिति क्यों और कैसे बनी है?

विद्यालय अब ज्ञान अर्जन की जगह न हो कर सुविधाओं की खरीद फरोख्त का विषय बन चुका है। अभिभावक अपने बच्चों को सुविधाओं से सुसिज्जत स्कूल में भेजना ही अपना कर्त्तव्य मानते हैं और यहीं शुरू होती है होड़ जो एक खतरनाक मोड़ की ओर ले जाते हैं। अब समय आ चुका है कि सरकार भी इस विषय पर सोचे और विद्या अर्जन के इस महान उद्देश्य को भ्रमित होने से रोके।

ऋषिपाल चौहान
चेयरमैन
जीवा पब्लिक स्कूल